भारतीय खाद्य निगम और अन्य

बनाम

मैसर्स बाबूलाल अग्रवाल

05 जनवरी 2004

[बृजेश कुमार एवं अरुण कुमार, न्यायाधिपतिगण]

भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 / भारतीय रजिस्ट्रेशन अधिनियम; धारा 17 / संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम; धारा 106 और 107:

खाद्य निगम और एक फर्म के मध्य समझौते की शर्तों के अनुसार प्लिंथ के निर्माण और मासिक किराए पर निगम को सौंपने के लिए अनुबंध -खाद्य निगम ने नोटिस दिया और सहमत अवधि की समाप्ति से पहले प्लिंथ खाली कर दिया - क्षति व शर्तों के उल्लंघन के लिए दावा - विचारण न्यायालय ने हर्जाना दिलवाया और फर्म के पक्ष में मुकदमे का फैसला सुनाया गया- उच्च न्यायालय ने हर्जाना कम करके डिक्री को संशोधित किया- अपील में, निर्धारित किया गया: निगम किए गए वादे से पीछे नहीं हट सकता और इस प्रकार संविदा की शर्तों के उल्लंघन के दायित्व से बच नहीं सकता। एग्रीमेंट डीड अपने आप में एक लीज डीड नहीं है - निष्पादन पर यह अचल संपत्ति के संबंध में एक अधिकार/अन्य दस्तावेज बनाता है - इसलिए एक निष्पादक करार है- इस प्रकार,

करार/लीज डीड को अनिवार्य रूप से पंजीकरण की आवश्यकता नहीं होती है - इसे उचित रूप से मासिक लीज डीड के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है -हालाँकि, अपीलकर्ता इसे करार की शर्तों के उल्लंघन के लिए अपने दायित्व से बचने का आधार नहीं बना सकता - जो कोई वचन करता है, अगर वह पीछे हटता है, तो उसे दूसरे पक्ष को मुआवजा देना होगा जिसने किए गए वचन के आधार पर ईमानदारी से काम किया है - इसलिए, खाद्य निगम मुआवजा देने के लिए उत्तरदायी है।

परिसीमा अधिनियम, अनुच्छेद 55:

परिसीमन की याचिका - आक्षेप उठाना - निर्धारित किया गया: इसे कम से कम अपीलीय चरण में उठाया जाना चाहिए यदि पहले नहीं उठाया गया था - चूंकि दावा परिसर खाली करने के तीन साल के भीतर दायर किया गया था, अतः परिसीमा से बाधित नहीं था।

अपीलकर्ता-निगम ने खाद्यान्न भंडारण के लिए तख्त/ प्लिंथ किराये पर लेने के लिए निविदाएं आमंत्रित कीं। प्रतिवादी-फर्म की निविदा को स्वीकार कर लिया गया। परिणामस्वरूप, अपीलकर्ता-निगम और प्रतिवादी-फर्म ने एक करार किया। करार की शर्तों के अनुसार फर्म को प्लिंथ का निर्माण करना था जिसे अपीलकर्ता-निगम द्वारा शुरू में तीन साल की अवधि के लिए किराए पर लिया जाएगा व जिसे मासिक किराए के भुगतान पर एक और वर्ष के लिए बढ़ाया जा सकता है। तदनुसार, फर्म ने

करार के तहत अपना कार्य पूरा कर लिया था और प्लिंथ निगम को सौंप दिये थे। बाद में निगम ने फर्म को नोटिस देकर प्लिंथ खाली करा लिए। फर्म ने हर्जाने के लिए दावा दायर किया। विचारण न्यायालय ने ब्याज सहित हर्जाना देने का निर्णय करते हुए दावा डिक्री किया। अपील पर उच्च न्यायालय ने हर्जाने की राशि कम करके डिक्री को संशोधित किया। इसलिए वर्तमान अपील और क्रॉस अपील प्रस्तुत की गयी।

अपीलकर्ता-निगम के लिए यह तर्क दिया गया था कि चूंकि तीन साल की अवधि के लिए कोई पंजीकृत लीज डीड निष्पादित नहीं की गयी थी, इसलिए किरायेदारी महीने-दर-महीने आधार पर बनाई गई थी और इसे नोटिस देकर विधिपूर्वक समाप्त किया जा सकता था; कि प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों के मदेनजर निगम क्षति के लिए उत्तरदायी नहीं था; कि करार विलेख एक अपंजीकृत दस्तावेज होने के कारण साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं होगा; और यह कि हर्जाने का दावा परिसीमा से बाधित था।

प्रतिवादी-फर्म की ओर से यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि चूंकि निगम ने करार की शर्तों का उल्लंघन करते हुए तीन साल की अवधि समाप्त होने से पहले प्लिंथ खाली कर दिए थे, इसलिए यह प्लिंथ के किराए के बराबर दर पर क्षति के लिए उत्तरदायी था।

अपील को खारिज करते हुए और क्रॉस अपील को स्वीकार करते हुए न्यायालय ने यह निर्धारित किया-

1.1 विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने सही माना है कि लीज डीड या पंजीकृत लीज डीड के बगैर लीज की प्रकृति मात्र मासिक लीज की तरह होगी। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि यह फर्म को उस करार की शर्तों के उल्लंघन के लिए क्षतिपूर्ति से वंचित कर देगा जिसके तहत फर्म ने बैंक से ऋण लेकर उसके करार के तहत अपने दायित्व का कार्य पूर्ण किया था। प्लिंथ का निर्माण निगम द्वारा दिए गए डिजाइन और विनिर्देश के अनुसार किया गया था। यह किसी अन्य व्यक्ति के लिए या किसी अन्य प्रयोजन के लिए उपयोगी नहीं हो सकता है। इस पृष्ठभूमि में, निगम द्वारा जो कहा गया था, वह महत्व रखता है और यदि कोई वचनदाता पीछे हटता है, तो उसे उस पक्षकार को मुआवजा देना होगा जिसने किए गए वचन के आधार पर ईमानदारी से काम किया है। [138-बी-डी]

1.2. प्रतिवादी-फर्म ने संविदा के उल्लंघन पर क्षतिपूर्ति के लिए दावा दायर किया। यह संविदा की विनिर्दिष्ट पालना के लिए दावा नहीं था। निश्चित रूप से निगम द्वारा फर्म को एक निश्चित किराए की दर पर तीन साल की अवधि के लिए परिसर पर कब्जा करने का वचन दिया गया था। परिसर वास्तव में निगम के निर्देशों और विशिष्टताओं के अनुसार बनाया गया था। उक्त निर्माण के लिए फर्म ने बैंक से ऋण लिया था। सब कुछ संविदा की शर्तों के अनुसार हुआ, सिवाय इसके कि किरायेदारी की अवधि को निगम द्वारा कब्ज़ा लेने से तीन साल से पहले ही रोक दी गई थी; यहां

तक कि एक मासिक लीज भी एक वर्ष से अधिक और उससे भी लंबी अवधि के लिए लागू रह सकती है। लीज डीड के निष्पादन को छोड़कर सब कुछ करार के अनुसार किया गया था, इसलिए पन्द्रह दिनों के नोटिस पर किरायेदारी समाप्त कर दी गई थी। फर्म इस बात पर जोर नहीं दे रही थी कि निगम को शेष अवधि के लिए कब्जा बरकरार रखना चाहिए या किरायेदारी समाप्त किये जाने योग्य नही थी, लेकिन किरायेदारी की समाप्ति का मतलब यह नहीं होगा कि वे करार के उल्लंघन पर क्षतिपूर्ति के लिए भी उत्तरदायी नहीं होंगे, जिस करार के तहत फर्म ने निर्माण कार्य किया और ऋण लेकर निवेश किया है। इसलिए, इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा कि तीन साल की लीज के लिये लीज डीड निष्पादित और पंजीकृत की गयी थी या नहीं। फर्म ने संविदा की विनिर्दिष्ट पालना के अनुतोष की प्रार्थना नहीं की। इसलिए, निगम द्वारा लिया गया बचाव कानूनी रूप से मान्य नहीं है। [137-G-H; 138-A-B; E-H)

भारत संघ और अन्य बनाम मैस. एंग्लो-अफगान एजेंसियां वगैरह, एआईआर (1968) एससी 718; मैस. मोतीलाल पदमपत शुगर मिल्स कंपनी लिमिटेड बनाम यूपी राज्य वगैरह, एआईआर (1979) एससी 621 और दिल्ली क्लॉथ एंड जनरल मिल्स बनाम यूनियन ऑफ इंडिया, एआईआर (1987) एससी 2414, में पारित निर्णय का संदर्भ लिया गया।

एनथोनी बनाम के.सी. लूप एंड संस वगैरह, (2000) 6 एसएससी 394 में पारित निर्णय से भिन्न मत व्यक्त किया गया।

1.3. निगम के निदेशक मंडल ने लीज को समय से पहले समाप्त करने के सवाल पर विचार किया था और महसूस किया था कि यद्यपि यह कानूनी हो सकता है परन्तु अन्यायपूर्ण और अनुचित भी होगा। इसलिए, उन्होंने एक परिपत्र जारी किया जिसमें कहा गया कि जहां भी तीन साल की गारंटी अवधि समाप्त नहीं हुई है, वहां प्लिंथ के मालिकों के साथ बातचीत के माध्यम से किराये की राशि की 5% की सीमा तक अपनी देयता को कम करके तीन साल की समाप्ति की तारीख तक प्लिंथ को किराए पर लेना जारी रखा जा सकता है। वे स्वयं तीन वर्ष की "गारंटी अवधि" के वचन से अच्छी तरह वाकिफ थे; इसलिए मात्र किराए में कमी चाहते थे। [139-जी-एच]

1.4. यह करार पूरी तरह से पंजीकरण अधिनियम, 1905 की धारा 17 की उपधारा (2) के उप-खंड (v) के तहत है। चूंकि यह केवल एक अन्य दस्तावेज़ प्राप्त करने का अधिकार सृजित करता है, जो निष्पादित होने पर उक्त अधिकार को सृजित करेगा। करार का खंड 8 केवल पक्षकारों के मध्य एक निर्धारित प्रोफार्मा में लीज डीड के निष्पादन की बात करता है जिसके तहत निगम निमार्ण कार्य पूरा होने पर परिसर का कब्ज़ा पाने का हकदार होगा। आवश्यक स्टांप शुल्क का वहन फर्म द्वारा किया जाना

था। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि करार अपने आप में एक लीज डीड नहीं है जिसके लिए पंजीकरण की आवश्यकता होती है। यह मात्र अचल संपत्ति के संबंध में अधिकार और दायित्व बनाते हुए एक अन्य दस्तावेज़ निष्पादित करने का अधिकार सृजित करता है। (141-ए-सी)

त्रिवेणीबाई और अन्य बनाम श्रीमती लीलाबाई, एआईआर (1959) एससी 620 में पारित निर्णय का संदर्भ लिया गया।

1.5. करार के खंड 8 के तहत तत्समय कोई अधिकार उत्पन्न नही हुआ और ना ही संपत्ति का कोई तत्काल हस्तानांतरण हुआ। यह केवल एक निष्पादक करार था। यह स्पष्ट है कि करार के निष्पादन के समय कोई कब्ज़ा, अधिकार या स्वामित्व का हस्तानांतरण नही किया गया और इसके साथ कई पूर्ववर्ती शर्तें भी जुड़ी हुई थीं। इस प्रकार के करार को उचित रूप से केवल एक निष्पादक करार माना गया है, ना कि अचल संपत्ति में अधिकार सृजित करने वाला करार, इसलिए इसे अनिवार्य रूप से पंजीकृत करने की आवश्यकता नहीं है। यह पक्षकारों के मध्य महज एक करार था जो पंजीकृत नहीं था लेकिन साक्ष्य में स्वीकार्य था। (142-बी-ई)

1.6. परिसीमा के बिन्दु पर कोई विवाद्यक कायम नही किया गया। उक्त बिन्दु को ना तो उच्च न्यायालय के समक्ष उठाया गया और ना ही इस न्यायालय में उठाया गया। केवल तारीखों/सारांश की सूची में यह अस्पष्ट रूप से कहा गया है कि दावा परिसीमा से बाधित था। यह सत्य है

कि न्यायालय को शुरुआत में ही यह देखना होता है कि दावा परिसीमा के भीतर है या नहीं। दावा दायर करते समय परिसीमा के बिन्दु पर हमेशा एक कार्यालय रिपोर्ट ली जाती है। लेकिन यदि न्यायालय प्रथम दृष्टया इसे उस स्तर पर समय से परे नहीं पाता है, तो इस बिंदु पर ऐसे किसी भी निष्कर्ष को उल्लेखित करना आवश्यक नहीं होगा, विस्तृत निष्कर्ष तो दूर की बात है। ऐसी स्थिति में, यदि पहले नहीं तो कम से कम अपीलीय चरण में, निगम चाहता तो परिसीमा के संबंध में आक्षेप उठाता। हस्तगत प्रकरण में तारीखों/सारांश की सूची में एक संदर्भ देने के अलावा परिसीमा के बिंदु पर कोई आधार अथवा प्रश्न नही उठाया गया है। अक्सर ऐसा होता है कि परिसीमा के प्रश्न में तथ्य का प्रश्न भी सुसंगत होता है, जिसे निगम द्वारा उठाया और इंगित किया जाना चाहिए था। यह अपेक्षित नही है कि आपत्ति करने वाला पक्ष तब तक चुप रहे जब तक कि मामला सर्वोच्च न्यायालय तक न पहुंच जाए और फिर गैर-गंभीर तरीके से यह तर्क देने के लिए उठे कि न्यायालय परिसीमा के कारण दावा को खारिज न करके अपने कर्तव्य में विफल रहा। प्रतिवादी ने 10.10.1988 को परिसर खाली कर दिया। यह वह तारीख है जब संविदा का उल्लघ्ंन हुआ वाद कारण भी अर्जित हुआ था। दावा 4.10.1991 को यानी परिसर खाली करने के तीन साल के भीतर दायर किया गया था। इसलिए, इस तर्क में कोई दम नहीं है कि फर्म का दावा परिसीमा से बाधित था। (142-जी-एच; 143-बी-डी)

इतविरा मथाई बनाम वर्की वर्की एवं अन्य, (1994) 1एससीआर 495 में पारित निर्णय का संदर्भ लिया गया।

1.7. एक बार क्षति की गणना को प्लिंथ के मासिक किराए की राशि के रूप में स्वीकार कर लिया गया है,तो जब तक कि इसे कम करने के लिए कोई तार्किक और ठोस कारण न हो, ऐसा नहीं किया जा सकता है। विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री के संशोधन के आदेश पर सवाल नहीं उठाया गया था। हालाँकि, डिक्री को बिना कोई ठोस कारण बताए संशोधित कर दिया गया है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा उस सीमा तक पारित निर्णय को रद्द कर दिया जाता है और विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री को बहाल किया जाता है। (144-ई-जी)

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 3484/1997

एफ.ए. संख्या 6 / 1995 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की जबलपुर पीठ के निर्णय और आदेश दिनांक 18.9.1996 से। साथ में

सी.ए. संख्या 3485/1997

अपीलकर्ता की ओर से एम.आर. राजेंद्रन नायर और शकील अहमद सैयद।

प्रतिवादी की और से जी.के. बनर्जी, एस. भटनागर, सौरभ अग्रवाल, सुश्री रूबी सिंह आहूजा

न्यायालय का फैसला **न्यायाधिपति ब्रिजेश कुमार**, द्वारा सुनाया गया।

दीवानी अपील संख्या 3484 / 1997 को भारतीय खाद्य निगम और अन्य द्वारा मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री के खिलाफ प्रस्तुत की गयी है, जिसमें केवल आंशिक रूप से उनकी अपील को स्वीकार किया गया है और विचारण न्यायालय की डिक्री को सीमित रूप से इस प्रकार संशोधित किया गया है कि देय राशि का 6% कम करने के बाद गणना की जाने वाली क्षति का प्रतिवादी हकदार होगा। विचारण न्यायालय द्वारा पारित शेष निर्णय और डिक्री को बरकरार रखा गया है।

जबकि दीवानी अपील संख्या 3485/1997 को मेसर्स बाबूलाल अग्रवाल (वादी) द्वारा मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा पारित उसी निर्णय और आदेश के खिलाफ प्रस्तुत किया गया है, जिसमें विचारण न्यायालय की डिक्री में आंशिक संशोधन करते हुए विचारण न्यायालय द्वारा आदेशित क्षतिपूर्ति की राशि में से 6% की कटौती की अनुमति दी गयी। सुविधा के लिए, पक्षकारान को वादी और प्रतिवादी के रूप में संदर्भित किया जाएगा जैसा कि मेसर्स बाबूलाल अग्रवाल द्वारा दायर मूल वाद में किया गया है।

भारतीय खाद्य निगम (संक्षेप में 'एफसीआई') ने खाद्यान्न भंडारण के लिए प्लिंथ किराए पर लेने के लिए निविदाएं आमंत्रित की। वादी ने अपनी निविदा प्रस्तुत की जिसे अंततः पत्रांक दिनांकित 11.6.1985 द्वारा स्वीकार किया गया। किराया 40 पैसे प्रति वर्ग फुट के हिसाब से तय किया। क्षेत्रीय प्रबंधक द्वारा लिखे गए पत्रांक दिनांकित 19.8.1985 द्वारा पुनः निविदा की

स्वीकृति एवं संविदा की शर्तों की पुष्टि की गई। पक्षकारान के मध्य दिनांक 12.2.1986 को एक करार हुआ। वादी का मामला यह है कि प्रतिवादी ने तीन साल की अवधि के लिए प्लिंथ किराए पर देने के लिए कहा जिसमें प्रतिवादी को एक और वर्ष तक अवधि बढ़ाने का विकल्प प्राप्त था। तय समय में प्लिंथ आदि का निर्माण नहीं हो सका। हालाँकि, अंततः यह निर्विवादित है कि इसे पूरा किया गया और 24.1.1987 को प्रतिवादी को सौंप दिया गया। कोई औपचारिक लीज डीड निष्पादित नहीं की गयी थी। प्रतिवादी ने 26.9.1988 को प्लिंथ खाली करने के लिए 15 दिन का नोटिस दिया और 10.10.1988 को उसे खाली कर दिया। उक्त अवधि तक का किराया अदा कर दिया गया। वादी के अनुसार यह प्रतिवादी द्वारा संविदा की शर्तों का उल्लंघन है, इसलिए 17 लाख रुपये की क्षतिपूर्ति का दावा प्रस्तुत किया गया। विचारण न्यायालय ने कुल 17,32, 709 /- रुपये की राशि की डिक्री पारित की तथा सिक्योरिटी राशि लौटाने व उस पर ब्याज अदा करने का आदेश किया। डिक्रीटल राशि पर 6% प्रतिवर्ष की दर से वाद प्रस्तुत करने की दिनांक 4.10.1991 से भुगतान की दिनांक तक वादी को ब्याज देने का आदेश भी किया।

पक्षकारान द्वारा उठाए गए बिंदुओं पर विचार करने से पहले दिनांक 12.2.1986 की संविदा की सुसंगत शर्तों को देखना सार्थक होगा। प्लिंथ का निर्माण वादी द्वारा उसके स्वामित्व की भूमि पर ही किया जाना था। उक्त संविदा की सुसंगत शर्तें इस प्रकार से हैं:

"1.विपक्षी संख्या 1 का यह पूर्णतया दायित्व होगा कि वह निर्माण कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व भूमि सीमा प्राधिकारी से आवश्यक अनुमति प्राप्त करे तथा स्थानीय निकायों जैसे नगर निगम या अन्य सक्षम

प्राधिकारी से निर्माण की जाने वाली प्लिंथ और अन्य सुविधाओं की योजना स्वीकृति प्राप्त करे।

2. प्लिंथ और अन्य सुविधाओं का आकार और ऊंचाई परिशिष्ट 'ए' में निर्धारित विनिर्देशों के अनुसार होगी।

3. पक्षकार संख्या 1 समय-समय पर पक्षकार संख्या 2 के निर्देशों के अनुसार साइट पर बिजली, जल आपूर्ति, आंतरिक और पहुंच सड़क, फेंसिग करने जैसी सेवाएं प्रदान करने के लिए जिम्मेदार रहेगा और इसके लिए कोई अतिरिक्त शुल्क का दावा नहीं किया जाएगा। हालाँकि उस अवधि में जब प्लिंथ व अन्य सुविधाएं पक्षकार संख्या 2 के पास लीज पर रहेगी उस दौरान बिजली की खपत का शुल्क निगम (पक्षकार संख्या 2) द्वारा वहन किया जाएगा। पानी की आपूर्ति के लिए उपयोग में ली जाने वाली विद्युत मोटर के रखरखाव की जिम्मेदारी पक्षकार संख्या 1 की होगी। कुएं या ट्यूबवेल के माध्यम से पानी की सुविधा के विफल होने पर पोर्टेबल पानी की आपूर्ति के लिए वैकल्पिक व्यवस्था पक्षकार संख्या 1 द्वारा की जाएगी।

4. xxxx xxxx xxxx

5. कार्य प्रारम्भ होने से पूर्व निर्माण के लिए प्रस्तावित प्लिंथ, बी सड़कें, कार्यालय ब्लॉक आदि को इंगित करने वाली ले-आउट योजना का पक्षकार संख्या 2 से अनुमोदन लिया जावेगा।

6.पक्षकार संख्या 2 को पक्षकार संख्या 1 द्वारा किये गये निर्माण कार्य का निरीक्षण अपने प्रतिनिधी/ नौकर/ठेकेदार आदि के माध्यम करने का पूर्ण अधिकार होगा। पक्षकार संख्या 1 कार्य की प्रगति के दौरान उसकी विशिष्टताओं का निरीक्षण करने के लिए पक्षकार संख्या 2 और उसके अधिकारी को पूर्ण सुविधाएं प्रदान करेगा।

7. xxxx xxxx xxxx

8. उपरोक्त उल्लेखित प्लिंथ और अन्य सुविधाओं का समस्त प्रकार से निर्माण पूरा होने पर और पक्षकार संख्या 2 या उसके द्वारा नामित उसके किसी अधिकारी से पूर्णता प्रमाण पत्र प्राप्त करने के बाद पक्षकार संख्या 2 द्वारा दिये गए निर्धारित प्रोफार्मा में पक्षकारान के मध्य निष्पादित किए जाने वाले लीज करार के तहत पक्षकार संख्या 1 पक्षकार संख्या 2 को प्लिंथ और अन्य सुविधाएं सौंप देगा। लीज डीड के निष्पादन के लिए आवश्यक स्टाम्प शुल्क पक्षकार संख्या 1 द्वारा वहन किया जाएगा।

9. यह स्पष्ट है कि समय इस करार का सार है। प्लिंथ और अन्य सुविधाओं का कार्य पूरा होने में किसी प्रकार के विलम्ब की स्थिति में या दोषपूर्ण कारीगरी पाये जाने पर या संरचना दोषपूर्ण पायी जाती है तो

पक्षकार संख्या 2 उक्त प्लिंथ को लीज पर लेने लेने के लिए बाध्य नहीं होगा तथा पक्षकार संख्या 1 द्वारा जमा बयाना राशि जब्त कर ली जावेगी। इस संबंध में पक्षकार संख्या 2 का निर्णय अंतिम होगा तथा पक्षकार संख्या 1 द्वारा इस पर कोई प्रश्न नहीं उठाया जाएगा। बयाना राशि तब भी जब्त कर ली जाएगी यदि पक्षकार संख्या 1 करार की शर्तों को बदलता है, संशोधित करता है, प्रस्ताव, शुल्क आदि वापिस लेता है या निर्माण के लिए निर्धारित समय के भीतर प्लिंथ और अन्य सुविधाओं का निर्माण पूरा करने में विफल रहता है।

10. से 11. xxxx xxxx xxxx

12.लीज की अवधि लीज संपत्ति का कब्ज़ा लेने की तारीख से तीन वर्ष की होगी। पक्षकार संख्या 2 लीज पर लागू समान दरों और शर्तों पर इसे एकऔर वर्ष तक आगे बढ़ाने की हकदार होगी।"

वादी का मामला यह था कि क्षतिपूर्ति के लिए वादी का दावा दिनांक 12.2.1986 के करार की शर्तों के उल्लंघन पर आधारित है क्योंकि प्रतिवादी ने तीन साल की अवधि के लिए प्लिंथ/प्लेटफॉर्म पर कब्जा करने के बजाय दिनांक 24.1.1987 को ही कब्ज़ा लेने के बाद 10.10.1988 को उसे खाली कर दिया था। इसलिए प्रतिवादी प्लिंथ के किराया की दर पर ही क्षतिपूर्ति के लिए उत्तरदायी था। प्रतिवादी का मामला यह है कि कोई भी पंजीकृत लीज डीड, जैसा कि करार में परिकल्पित है, तीन साल की अवधि

के लिए निष्पादित नहीं की गयी थी, इसलिए यह केवल महीने दर महीने के लिए किरायेदारी थी और सम्पत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 106 के प्रावधानों के तहत प्रतिवादी पंद्रह दिनों के नोटिस पर किरायेदारी समाप्त कर सकता था और परिसर खाली कर सकता था। पक्षकारान के अभिकथनों पर अदालत ने विवाद्यक विरचित किये। केवल विवाद्यक संख्या 3 और 4 सुसंगत है जिनके संबंध में हमारे समक्ष तर्क प्रस्तुत किए गए हैं, जिन्हें नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

"3. क्या कथित लीज के पंजीकरण के अभाव में तीन साल के लिए पक्षकारान के मध्य किरायेदारी की लीज मासिक थी और यह नोटिस द्वारा समाप्त किये जाने योग्य थी?

4. क्या प्रतिवादी 'प्रॉमिसरी एस्टोपेल' के सिद्धांत पर तीन साल तक किराया देने के लिए बाध्य था? "

उक्त दोनों विवाद्यक पर विचारण न्यायालय ने सकारात्मक निष्कर्ष दर्ज किए हैं, लेकिन विवाद्यक संख्या 3 के संबंध में यह माना गया कि प्रतिवादी की ओर से संविदा का उल्लंघन हुआ था। विचारण न्यायालय ने ऊपर बताए गए निष्कर्षों को दर्ज करते समय एक विस्तृत विवेचना की है और इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि एक बार जब वादी ने करार के तहत अपना कार्य पूरा कर लिया और अपनी स्थिति बदल दी थी, अर्थात् प्रतिवादी के विनिर्देश के अनुसार प्लिंथ का निर्माण किया था, प्रतिवादी

द्वारा दी गई इस शर्त पर कि निर्माण पूरा होने पर वह परिसर को तीन साल की अवधि के लिए किराए पर लेगा, प्रतिवादी बाद में इस प्रकार के वचन से पीछे नहीं हट सकता था। यह भी उल्लेखित किया गया है, और यह सही भी है, कि निविदा सूचना के साथ-साथ पत्राचार में भी बार-बार यह स्पष्ट रूप से दिया गया था कि प्रतिवादी तीन साल की अवधि के लिए वादी द्वारा निर्मित प्लिंथ का उपयोग करेगा। वास्तव में, निर्माण पूरा होने पर प्रतिवादी ने प्लिंथ पर कब्जा किया था और सहमति के अनुसार किराया भी दे रहा था, लेकिन सम्पत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 106 के प्रावधानों के अनुसार 15 दिनों का नोटिस देकर उक्त किरायेदारी समाप्त कर दी और दिनांक 0.10.1988 को परिसर खाली कर दिया। इस बिंदु के संबंध में यह ध्यान देने योग्य है कि प्रतिवादी स्वयं ने स्वीकृत रूप से दिनांक 16.10.1986 को यूनाइटेड कमर्शियल बैंक को एक पत्र लिखा था जिसमें यह उल्लेख किया था कि लीज तीन साल की अवधि की थी और वादी को देय किराया वादी को दिए गए ऋण के बदले सीधे बैंक को भेजा जाएगा।

प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने हमें पत्राचार के माध्यम से यह भी दिखाया कि वादी द्वारा प्लिंथ के निर्माण के लिए बैंक से लिए गए ऋण को समायोजित करने के लिए प्रतिवादी द्वारा बैंक में किराए की राशि जमा करने की व्यवस्था थी। एफसीआई द्वारा प्रदान किए गए और निर्धारित डिजाइन और विनिर्देशों के अनुसार ही निर्माण कार्य किया गया। ऐसे सभी

तथ्यों पर विचार करते हुए जो स्पष्ट रूप से प्रतिवादी द्वारा परिसर को शुरू में तीन साल की अवधि के लिए कब्जे में लेने के लिए इंगित किए गए थे और और वादी ने बैंक से ऋण लेकर तदनुसार धन की व्यवस्था की थी, विचारण न्यायालय ने, हमारे मत में, इस न्यायालय के पूर्व के फैसलों का हवाला देते हुए यह सही कहा है कि प्रतिवादी किए गए वादे से पीछे नहीं हट सकता है और संविदा की शर्तों के उल्लंघन के लिए क्षतिपूर्ति के दायित्व से बच नहीं सकता है।

हालाँकि, हम यहां बताना चाहते हैं कि प्रतिवादी अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने मुख्य रूप से तीन बिंदुओं पर अधिक जोर दिया है। पहला बिन्दु यह है कि कोई पंजीकृत लीज डीड नहीं होने के कारण यह एक मासिक किरायेदारी थी और इसे 15 दिनों का नोटिस देकर वैध रूप से समाप्त किया जा सकता था और चूंकि किरायेदारी तदनुसार समाप्त की गई थी, इसलिए प्रतिवादी अपीलकर्ता पर नुकसान की देनदारी का बोझ डालने का कोई अवसर नहीं था। पंजीकृत लीज डीड के अभाव में, यह तर्क दिया गया है कि यह नहीं माना जा सकता है कि प्रतिवादी अपीलकर्ता को लीज पर दी गई संपत्ति तीन साल की अवधि के लिए थी। दूसरी आपत्ति जो उठाई गई वह यह है कि दिनांक 12.2.1986 के करार को भारतीय रजिस्ट्रेशन अधिनियम के प्रावधानों के तहत पंजीकृत करने की आवश्यकता थी । अपंजीकृत करार साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं होने से उस पर कार्यवाही नहीं की जा सकती। अन्य आपत्ति यह उठाई गई कि दावा परिसीमा अवधि

के बाद दायर किया गया था। प्रथम तर्क के समर्थन में सम्पत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 107 का संदर्भ दिया गया है, जिसके अनुसार पक्षकारान को एक पंजीकृत लीज डीड निष्पादित करनी थी लेकिन ऐसा नहीं किया गया। हमारे मत में उच्च न्यायालय ने इस सवाल पर सही विचार किया है कि वादी ने लीज के करार को लागू करने के लिए दावा दायर नहीं किया था। यह संविदा के उल्लंघन के लिए क्षतिपूर्ति के लिए दायर किया गया दावा था। यह संविदा की विनिर्दिष्ट पालना बाबत दावा नहीं था। प्रतिवादी द्वारा निश्चित रूप से किराये की तयसुदा दर पर तीन साल की अवधि के लिए परिसर पर कब्जा करने का वचन अपीलकर्ता से किया गया था। वास्तव में परिसर का निर्माण प्रतिवादी के निर्देशों और विशिष्टताओं के अनुसार किया गया था। उक्त निर्माण के लिए वादी ने बैंक से ऋण लिया था। सब कुछ संविदा की शर्तों के अनुसार हुआ, सिवाय इसके कि किरायेदारी की अवधि प्रतिवादी द्वारा कब्ज़ा लेने से तीन साल की अवधि से पहले समाप्त कर दी गई थी। यह देखा जा सकता है कि एक मासिक लीज भी एक वर्ष से अधिक और किसी भी लंबी अवधि के लिए जारी रह सकती है। हमारे विचार में विचारण न्यायालयऔर उच्च न्यायालय ने यह सही माना है कि लीज डीड या पंजीकृत लीज डीड नही होने की स्थिति में लीज की प्रकृति केवल मासिक लीज की होगी। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि इससे वादी को उस करार की शर्तों के उल्लंघन के लिए क्षतिपूर्ति से वंचित कर दिया जाएगा जिसके तहत उसने

बैंक से ऋण लेकर अपने उपर दायित्व बढाकर उक्त करार के तहत अपने दायित्व का हिस्सा निभाया था,और उसे बाद में यह बता दिया जावे कि करार में व्यक्त सहमति के अनुसार कोई लीज निष्पादित या पंजीकृत नहीं होने से उक्त का कोई अर्थ नही रह गया। प्लिंथ का निर्माण प्रतिवादी द्वारा दिए गए डिजाइन और विनिर्देश के अनुसार किया गया था। यह किसी अन्य व्यक्ति के लिए या किसी अन्य प्रयोजन के लिए उपयोगी नहीं हो सकता है। इस पृष्ठभूमि में, प्रतिवादी द्वारा जो कहा गया था उसका महत्व है और यदि कोई वचन देता हैऔर फिर पीछे हटता है तो उसे उस पक्ष को मुआवजा देना होगा जिसने उक्त वचन के आधार पर ईमानदारी से काम किया है। जैसा कि पहले बताया गया, अन्य पत्राचार के साथ यहां तक कि निविदा नोटिस से यह प्रकट है कि प्रतिवादी तीन साल की अवधि के लिए परिसर पर कब्जा करेगा। लीज डीड के निष्पादन के अलावा सब कुछ करार के अनुसार किया गया था, इसलिए 15 दिनों के नोटिस पर किरायेदारी समाप्त कर दी गई थी। वादी इस बात पर जोर नहीं दे रहा है कि प्रतिवादी को शेष अवधि के लिए कब्जा बरकरार रखना चाहिए या किरायेदारी समाप्त किये जाने योग्य नही थी, लेकिन किरायेदारी समाप्ति का मतलब यह नहीं होगा कि प्रतिवादी उक्त वचन के उल्लंघन पर क्षतिपूर्ति के लिए भी उत्तरदायी नहीं होगा, जिस करार की शर्तों के तहत वादी ने निर्माण कार्य किया हैं और ऋण जुटाकर पैसा निवेश किया है। इसलिए, हमारे विचार में, इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा कि तीन साल के लीज डीड निष्पादित और

पंजीकृत की गयी थी या नहीं। करार का निष्पादन और उसके अस्तित्व का तथ्य तथा उसके नियम व शर्तें विवादित नहीं हैं। ना ही इस बात पर विवाद है कि प्रतिवादी द्वारा यह कहा गया था कि वह परिसर पर तीन साल की अवधि के लिए कब्जा करेगा, जिसे दोनों पक्षों की सहमति के अनुसार किराए की दर पर प्रतिवादी के विकल्प पर एक वर्ष तकऔर बढ़ाया जा सकता है। मौजूदा मामले में वादी ने संविदा की विनिर्दिष्ट पालना के अनुतोष की प्रार्थना नहीं की है। मामले के इस दृष्टिकोण से, हमारी राय में प्रतिवादी अपीलकर्ता लिया गया बचाव कानूनी रूप से मान्य नहीं है। विचारण न्यायालयऔर उच्च न्यायालय ने *यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य बनाम मिस एंग्लो-अफगान एजेंसियां आदि* एआईआर (1968) एससी पेज 718 में रिपोर्ट किए गए इस न्यायालय के फैसले पर सही भरोसा किया है, जिसमें जहां यह माना गया कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 299 के संदर्भ में संविदा का गैर-निष्पादन सरकार के खिलाफ प्राेमिसरी एस्टोपल के सिद्धांत की प्रयोज्यता के विरूद्व नहीं है। हमारे मत में इस न्यायालय के कुछ अन्य फैसले जैसे कि एआईआर (1979) एससी पृष्ठ 621 *मैसर्स मोतीलाल पदमपत शुगर मिल्स कंपनी लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य* तथा एआईआर (1987) एससी पृष्ठ 2414 *दिल्ली क्लोथ् और जनरल मिल्स बनाम भारत संघ* का संदर्भ इस बाबत सही लिया गया है, जिसमें किसी पक्षकार द्वारा वचन देकर दूसरे पक्ष को उक्त वचन के आधार पर अपनी स्थिति बदलने के लिए मजबूर करने के

बाद उक्त वचन से पीछे हटने पर उक्त पक्षकार के दायित्व को निर्धारित किया गया है।

अपीलकर्ता की ओर से (2000) 6 एससीसी 394 *एंथोनी बनाम के.सी. इल्ट्रप एण्ड सन्स व अन्य* में पारित इस न्यायालय के निर्णय का भी संदर्भ प्रस्तुत किया गया है। एक अपंजीकृत लीज डीड जिसे 5 वर्ष की अवधि के लिए लागू किया जाना आशयित था, इस बाबत यह तय किया गया कि उक्त लीज डीड अपंजीकृत होने से सम्पत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 107 और रजिस्ट्रेशन अधिनियम, 1908 की धारा 17(1) और 49 में निहित प्रावधानों के मद्देनजर लीज अधिकार का सृजन नही होना नही पाया गया। इसलिए, इस निर्णय से अपीलकर्ता को हस्तगत प्रकरण में मदद नहीं मिलेगी चूंकि यह मामला नहीं है कि किरायेदारी का अधिकार दिनांक 12.2.1986 के करार के तहत उत्पन्न हुआ हो। उक्त करार मात्र पंजीकृत विक्रय विलेख के निष्पादन को बताता है। उक्त करार को किसी भी न्यायालय या प्रतिवादी द्वारा कभी भी लीज डीड के रूप में नहीं माना गया है। इस मामले में जो तथ्य सामने आया है वह यह है कि निविदा सूचना के प्रकाशन से लेकर अंत तक, करार में भी यह कहा गया था कि अपीलकर्ता परिसर को तीन साल की अवधि के लिए किराए पर लेगा। तीन साल की इस अवधि को अपीलकर्ता द्वारा गारंटी अवधि के रूप में वर्णित किया गया है, जिसके दौरान लीज को जारी रखना था। हम पहले ही यह चुके हैं कि दिनांक 12.2.1986 करार लीज डीड नही होने के कारण

पंजीकरण योग्य नहीं था। यह मामला मूल रूप से इस निर्विवादित तथ्य पर टिका है कि अपीलकर्ता द्वारा प्रतिवादी से परिसर को तीन साल के लिए किराए पर लेने का वचन दिया गया था जिसकी प्रतिक्रिया में प्रतिवादी ने अपना कब्जा हटा लिया था।

यहां यह उल्लेखनीय है कि भारतीय खाद्य निगम के निदेशक मंडल ने लीज की समयावधि से पूर्व समाप्ति के सवाल पर विचार किया और अपनी बैठक में यह जाहिर किया कि हालांकि यह कानूनी हो सकता है लेकिन यह अन्यायपूर्ण और अनुचित होगा, इसलिए एक परिपत्र दिनांकित 4.5.1989 जारी किया गया जिसमें यह उल्लेखित किया गया कि इस मामले पर 194 वीं बैठक में विचार किया गया था और यह निर्णय लिया गया था कि जहां भी तीन साल की गारंटी अवधि समाप्त नहीं हुई है, वहां प्लिंथ के मालिकों के साथ बातचीत के माध्यम से किराये की राशि की 5% की सीमा तक अपनी देयता को कम करके तीन साल की समाप्ति की तारीख तक प्लिंथ को किराए पर लेना जारी रखा जा सकता है। प्रतिवादी स्वयं तीन साल की "गारंटी अवधि" के वचन से अच्छी तरह वाकिफ था, इसलिए, केवल किराए में कमी चाहता था।

प्रतिवादी की ओर से अगला तर्क यह दिया गया है कि करार दिनांकित 12.2. । 986 जिसमें तीन साल की अवधि के लिए लीज के निष्पादन और पंजीकरण का प्रावधान था, को रजिस्ट्रेशन अधिनियम 1908

की धारा 2(7) के अनुसार पंजीकृत कराना आवश्यक था। धारा 2 की उप-धारा (7) नीचे उद्धृत की गई है:

"2. परिभाषाएँ- इस अधिनियम में, जब तक कि विषय या संदर्भ में कोई बात प्रतिकूल न हो-

xxxx xxxx

(7) "पट्टे" के अन्तगर्त प्रतिलेख, कृषि या अधिभोग कराने का वचन और पट्टे पर देने का करार शामिल है;"

यह तर्क दिया गया कि चूंकि पट्टे के लिए एक करार हुआ था, इसलिए इसे पंजीकृत किया जाना आवश्यक था। इस संबंध में दो अन्य प्रावधान, धारा 17(1)(घ) और धारा । 7(2)(v), जो इस बिंदु के प्रयोजन से प्रासंगिक हो सकते हैं, का भी अवलोकन किया जाना चाहिये। धारा 17(1)(घ) इस प्रकार है:

"दस्तावेज जिनका रजिस्ट्रीकरण अनिवार्य है- निम्नलिखित दस्तावेजो की रजिस्ट्री करनी होगी यदि वह सम्पत्ति जिससे उनका सम्बन्ध है, ऐसे जिले में स्थित है, जिसमेंऔर यदि वे दस्तावेज उस तारीख को या के पश्चात निष्पादित हुयी है, 1864 का एक्ट संख्याक 16, या इण्डियन रजिस्ट्रेशन एक्ट 1866 या इण्डियन रजिस्ट्रेशन एक्ट 1871 या इण्डियन रजिस्ट्रेशन एक्ट 1877 या यह अधिनियम प्रवर्तन में आया

था या आता है, अर्थात -

xx xxx xxx

(घ्) वर्षानुवर्ष या एक वर्ष से अधिक की किसी अवधि के लिए, या वार्षिक भाटक कोऔरक्षित रखने वाले स्थावर संपत्ति के पट्टे"

अन्य प्रासंगिक प्रावधान धारा 17 की उपधारा (2) का खंड (v) है, जो इस प्रकार है-

"17(2) उपधारा (1) के खंड (ख) और (ग) में की कोई भी बात निम्नलिखित को लागू नहीं होगी-

(v) उप-धारा (1क) में विनिर्दिष्ट दस्तावेजों से भिन्न किसी एेसे दस्तावेज को जो स्वंय तो स्थावर सम्पत्ति पर या स्थावर सम्पत्ति में एक सौ रूपये या उससे अधिक मूल्य का कोई अधिकार, हक या हित सृष्ट,

घोषित, समनुदेशित, परिसीमित या निर्वापित नही करती, किन्तु एसी दूसरी दस्तावेज को अभिप्राप्त करने अधिकार सृष्ट करती है, जो निष्पादित की जाने पर एेसा कोई अधिकार, हक या हित सृष्ट, घोषित,

समनुदेशित, परिसीमित या निर्वापित करेगी...."

दिनांक 12.2.1986 का करार पूरी तरह से ऊपर उद्धृत धारा 17 की उपधारा (2) के खंड (v) के तहत है। चूँकि यह केवल एक अन्य दस्तावेज़ प्राप्त करने का अधिकार सृजित करता है जिसे निष्पादित करने पर ऐसा अधिकार सृजित होगा। इस परिपेक्ष्य में उक्त करार की शर्तों का उल्लेख करना आवश्यक है। उपरोक्त उद्धृत करार का खंड 8 इस बाबत स्पष्ट है कि

प्लिंथ आदि का निर्माण पूर्ण होने पर परिसर को निर्धारित प्रोफार्मा में पक्षकारान के मध्य निष्पादित किए जाने वाले पट्टा/लीज करार के तहत प्रतिवादी को सौंप दिया जाएगा। इस प्रकार खंड 8 केवल पक्षकारान के मध्य एक निर्धारित प्रोफार्मा में पट्टा /लीज विलेख के निष्पादन की बात करता है जिसके तहत प्रतिवादी निर्माण कार्य पूरा होने पर परिसर का कब्ज़ा पाने का हकदार होगा। आवश्यक स्टांप शुल्क वादी द्वारा वहन किया जाना था। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि दिनांक 12.2.1986 का करार स्वतः एक पट्टा विलेख नहीं है जिसके पंजीकरण की आवश्यकता है। यह केवल अचल संपत्ति के संबंध में अधिकार और दायित्व बनाने वाले अन्य दस्तावेज़ को निष्पादित करने का अधिकार सृजित करता है। विचारण न्यायालयऔर उच्च न्यायालय ने भी इस संबंध में एआईआर (1959) एससी पृष्ठ 620 *त्रिवेणीबाई और अन्य बनाम श्रीमती लीलाबाई* में पारित निर्णय पर भरोसा किया है जिसका पैरा संख्या 15 इस प्रकार है:

"15. इस दस्तावेज़ की व्याख्या करते समय यह याद रखना आवश्यक है कि इसे आम लोगों द्वारा बिना कानूनी सहायता के निष्पादित किया गया है, और इसलिए इसे तकनीकी विचारों का सहारा लिए बिना

उदारतापूर्वक समझा जाना चाहिए। दस्तावेज़ का शीर्षक, हालांकि प्रासंगिक है, उसके चरित्र का निर्धारण नहीं करेगा। यह सच है कि एक करार वर्तमान में कार्य करेगा, हालांकि इसकी शर्तें भविष्य की दिनांक में

लागू हो सकती हैं। इसी तरह, यह वर्तमान में है, भले ही पक्षकारान

भविष्य में अधिक औपचारिक दस्तावेज़ निष्पादित करने पर विचार कर सकते हैं। दस्तावेज़ के प्रभाव पर विचार करते समय हमें यह जांच करनी

चाहिए कि क्या इसमें वर्तमान के संदर्भ में अयोग्य और बिना शर्त के शब्द शामिल हैं और लीज/पट्टे की आवश्यक शर्तें शामिल हैं। आम तौर पर यदि किसी करार के तहत किराया उसके निष्पादन की तारीख या

अन्य निर्दिष्ट तिथि से देय होता है, तो इसे वर्तमान में कार्यरत होना कहा जा सकता है। एक अन्य प्रासंगिक जांच है, कब्ज़ा प्रदान करने का आशय। यदि कब्ज़ा एक करार के तहत दिया गया है और किरायेदारी की अन्य शर्तें निर्धारित की गई हैं, तो उक्त करार को पट्टे /लीज के करार के रूप में लिया जा सकता है। जैसा कि अन्य दस्तावेजों की व्याख्या में होता है, वैसे ही लीज/पट्टे के करार की व्याख्या में भी सभी प्रासंगिक और भौतिक शर्तों को ध्यान में रखा जाना चाहिए; और यदि संभव हो तो प्रासंगिक शर्तों में सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया जाना चाहिए और उनमें से किसी को भी निष्क्रिय अधिशेष नहीं माना जाना

चाहिए।"

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यदि करार ऐसा है जो वर्तमान में हो सकता है, भले ही दस्तावेज़ को बाद में निष्पादित करने पर विचार किया जाना हो, यह अधिकार सृजित करने वाला दस्तावेज़ या करार हो सकता है। वतर्मान में संपत्ति का हस्तानांतरण होना चाहिए। लेकिन भविष्य में किसी अन्य करार या विलेख को प्राप्त करने के लिए किया गया करार,

ऐसा करार या दस्तावेज़ नहीं होगा जिसके लिए पंजीकरण की आवश्यकता हो। करार के खंड 8 के तहत वर्तमान में कोई अधिकार उत्पन्न नहीं होता और न ही संपत्ति का कोई तत्काल हस्तानांतरण हुआ। यह केवल एक कार्यकारी करार था। ऐसा लगता है कि अन्य सुविधाओं के साथ प्लिंथ का निर्माण अभी शुरू होना था । निर्माण पूरा होने पर प्रतिवादी से ऐसा प्रमाणपत्र प्राप्त किया जाना था। इसके बाद कब्जा /लीज पट्टा करार के तहत सौंपा जाना था जिसे पक्षकारान के मध्य निष्पादित होना था। निर्माण पूरी तरह से प्रतिवादी के निर्देशों और विशिष्टताओं के अनुरूप होना था। शर्त संख्या 9 के तहत यह भी प्रावधानित है कि दोषपूर्ण कारीगरी पाये जाने पर या संरचना दोषपूर्ण पायी जाती है तो प्रतिवादी परिसर पर कब्जा करने से इनकार कर सकता है और बयाना राशि जब्त की जा सकती है। इसलिए यह स्पष्ट है कि करार के निष्पादन के समय वर्तमान में कोई कब्ज़ा, अधिकार या स्वामित्व हस्तांतरित नहीं हुआ था, और इसके साथ कई पूर्ववर्ती शर्तें जुड़ी हुई थीं। इस प्रकार का करार, हमारे विचार में, केवल एक निष्पादक करार माना गया है, ना कि अचल संपत्ति में अधिकार सृजित करने वाला करार, इसलिए इसे अनिवार्य रूप से पंजीकृत होने की आवश्यकता नहीं है। यह पक्षकारान के मध्य महज एक करार था जो पंजीकृत नहीं था लेकिन साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य था।

अगला तर्क यह लिया गया कि वादी द्वारा दायर दावा परिसीमा से बाधित था। अपीलार्थी द्वारा दिनांक 11.6.1985 को निविदा स्वीकार की गई।

परिसर 24.1.1987 को प्रतिवादी को सौंप दिया गया था। प्रतिवादी ने 10.10.1988 को परिसर खाली करने के लिए 15 दिन का नोटिस दिया, जिस तारीख को उन्होंने 10.10.1988 तक का किराया देकर परिसर खाली कर दिया। दावा 4.10.1991 को दायर किया गया था।

परिसीमन बाबत इस आपत्ति के संबंध में वादी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि प्रतिवादी द्वारा कभी भी ऐसा कोई आक्षेप नहीं उठाया गया और ना ही कोई तथ्य या कारण बताया गया था कि किस प्रकार से दावा परिसीमा से बाधित था। परिसीमा के प्रश्न पर कोई विवाद्यक विरचित नहीं किया गया। उक्त तर्क ना तो उच्च न्यायालय में और ना ही इस न्यायालय में उठाया गया। केवल तारीखों/सारांश की सूची में यह अस्पष्ट रूप से कहा गया है कि दावा परिसीमा से बाधित था। हालाँकि, प्रतिवादी अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने परिसीमा अधिनियम की धारा 3 के तहत यह तर्क दिया कि यह देखना न्यायालय का कर्तव्य था कि दावा परिसीमा के भीतर था या नहीं। परिसीमा से परे दायर किया गया दावा खारिज किया जा सकता है, भले ही परिसीमा को बचाव के रूप में स्थापित नहीं किया गया हो। कानून के तहत प्रदान की गई उपरोक्त स्थिति पर विवाद नहीं किया जा सकता है और न ही हमारे सामने इस पर विवाद किया गया है। लेकिन पूरी निष्पक्षता से यह हमेशा अपेक्षित है कि यदि प्रतिवादी ऐसा कोई मुद्दा उठाना चाहता है, तो बेहतर होगा कि वह इसे अपने अभिकथनों में उठाए ताकि दूसरा पक्ष भी उस आधार और तथ्यों को समझ सके

जिसके कारण दावा को परिसीमा बाधित बताकर खारिज किया जा रहा हो। यह सच है कि न्यायालय को शुरुआत में ही यह जांचना पड़ सकता है कि दावा परिसीमा के भीतर है या नहीं। दावा दायर करने के समय परिसीमा के बिन्दु पर हमेशा एक कार्यालय रिपोर्ट होती है। लेकिन यदि न्यायालय को उस स्तर पर प्रथम दृष्टया यह नहीं लगता है कि दावा परिसीमा से परे है, तो इस बिंदु पर ऐसे किसी भी निष्कर्ष को रिकॉर्ड करना आवश्यक नहीं होगा, विस्तृत तो क्या। ऐसी स्थिति में, यदि पहले नहीं तो कम से कम अपीलीय चरण में, प्रतिवादी चाहता तो परिसीमा के संबंध में आक्षेप उठाता। हस्तगत प्रकरण में तारीखों/सारांश की सूची में एक संदर्भ देने के अलावा परिसीमा के बिंदु पर कोई आधार अथवा प्रश्न नही उठाया गया है। अक्सर ऐसा होता है कि परिसीमा के प्रश्न में तथ्य का प्रश्न भी सुसंगत होता है, जिसे प्रतिवादी द्वारा उठाया और इंगित किया जाना चाहिए। यह अपेक्षित नही है कि आपत्ति करने वाला पक्ष तब तक चुप रहे जब तक कि मामला सर्वोच्च न्यायालय तक न पहुंच जाए और फिर गैर-गंभीर तरीके से यह तर्क देने के लिए उठे कि न्यायालय परिसीमा के कारण दावा को खारिज न करके अपने कर्तव्य में विफल रहा। हो सकता है कि विचारण न्यायालय को प्रकरण परिसीमा से बाधित नहीं लगे और वह मामले को आगे बढ़ाये, लेकिन उस स्थिति में न्यायालय को ऐसे किसी भी निष्कर्ष को रिकॉर्ड करने की आवश्यकता नहीं होगी जब तक कि प्रतिवादी द्वारा इस बाबत आक्षेप नहीं उठाया जाता है। इस संबंध में प्रतिवादी के विद्वान

अधिवक्ता ने (1964) I एससीआर पृष्ठ 495, पृष्ठ 506, *ईत्ताविरा मथाई बनाम वर्की वर्की और अन्य* में रिपोर्ट किए गए निर्णय पर भरोसा किया है, जिसमें यह माना गया है कि यदि यह एक तथ्य और कानून का मिश्रित प्रश्न है, तो किसी पक्ष को बाद में इसे उठाने की अनुमति नहीं दी जाएगी यदि ऐसी आपत्ति जल्द से जल्द नहीं उठाई गई हो। हालाँकि, हमारे विचार में परिसीमा की अवधि तीन वर्ष होगी क्योंकि प्रकरण परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 55 के अंतर्गत आता है, जैसा कि प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने बताया है। अनुच्छेद 55 इस प्रकार है:

दावा का विवरण	परिसीमा अवधि	जिस समय से अवधि प्रारम्भ होती है
55. किसी भी संविदा के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष उल्लंघन के लिए मुआवजे बाबत जिसे विशिष्ट रूप से प्रावधानित नही किया है	तीन वर्ष	जब संविदा टूट जाती है, या (जहां लगातार उल्लंघन होते हैं) जब उल्लंघन जिसके संबंध में मुकदमा दायर किया गया है होता है, या (जहां उल्लंघन जारी है) जब यह समाप्त हो जाता है।

हस्तगत प्रकरण में, जैसा कि ऊपर बताया गया है, संविदा समाप्ति के नोटिस की दिनांक 26.9.1988 है, जिसमें कहा गया है कि "हम आपके उपरोक्त प्लिंथ को अक्टूबर 10, 1988 तक खाली कर देंगे"। वादी ने नोटिस का जवाब देते हुए कहा कि प्रतिवादी 23.1.1990 से पहले परिसर खाली नहीं कर सकता है। हालाँकि, प्रतिवादी ने 10.10.1988 को परिसर खाली कर दिया। यह वह तारीख है जब संविदा का उल्लंघन हुआ था और वादकारण उत्पन्न हुआ। दावा 4.10.1991 को यानी परिसर खाली करने के तीन साल के भीतर दायर किया गया था। उपरोक्त परिस्थिति के मदेनजर, हमें अपीलकर्ता की ओर से उठाए गए तर्क में कोई योग्यता नहीं मिलती है कि वादी का दावा परिसीमा बाधित था। में। परिणामस्वरूप, हमें भारतीय खाद्य निगम द्वारा की गई अपील में कोई सार नहीं मिला।

हमें नुकसान की राशि को 6% की सीमा तक कम करने का कोई यथोचित कारण भी प्राप्त नही है, क्योंकि निदेशक मंडल ने निर्णय लिया था कि किराए पर लिये गये परिसर को उसी अवधि के लिए जारी रखा जा सकता है, लेकिन बातचीत के माध्यम से किराये की राशि की 5% की सीमा तक अपनी देयता को कम किया जा सकता है। वादी अपीलकर्ता मैसर्स बाबूलाल ऐसे किसी सुझाव से कभी सहमत नहीं हुई थी। एक बार क्षतिपूर्ति की गणना को प्लिंथों के मासिक किराया स्वरूप मान लिया गया

है, तो जब तक कि इसे कम करने का कोई तार्किक और ठोस कारण न हो, ऐसा नहीं किया जा सकता था। विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री के संशोधन के आदेश के विरूद्व कोई आक्षेप नहीं उठाया गया है। हमारे विचार में, डिक्री को बिना कोई ठोस कारण बताए संशोधित किया गया है। अतः उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय का उक्त भाग अपास्त किये जाने योग्य है।

परिणामस्वरूप, दीवानी अपील संख्या 3484/ 1997 अनुवान भारतीय खाद्य निगम एवं अन्य बनाम मैसर्स बाबूलाल अग्रवाल को खारिज किया जाता हैऔर दीवानी अपील संख्या 3485/1997 अनुवान मैसर्स बाबूलाल अग्रवाल बनाम भारतीय खाद्य निगमऔर अन्य स्वीकार की जाती है तथा विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री बहाल की जाती है। पक्षकारान अपना-अपना खर्च स्वयं वहन करेंगे।

सी.ए. क्रमांक 3484/97 खारिज की गयी।

सी.ए. क्रमांक 3485/97 स्वीकार की गयी।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी कविता कच्छवाहा - (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा मे समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा मे अनुवादित किया गया है और अन्य उददेश्य के लिए इसका उपयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उददेश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उददेश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।